ध्वजा चिह्न अर्चन

-डॉ. श्रीकृष्ण जुगनू

भारतीय जनजीवन में आयुध और कुलगत लक्षण-चिह्न के पूजन की परम्परा रही है। यह लोकानुमत तो है ही, पुराणों से अनुमोदित भी है। यह देवी-देवताओं की अर्चना की तरह ही होती है और यही कारण है कि आयुधों और चिह्नों को भी देवतुल्य आदर दिया गया है। यह पूजन कुल, वंश की समृद्धि के ध्येय से होता है और यह विश्वास रहा है कि यह अर्चना बल और सर्वदृष्टि सम्पन्नता का पोषण करता है। यही कारण है कि ध्वज, पताका ही नहीं, आयुध तक देवी-देवताओं के स्वरूप के साथ बनाए जाते रहे हैं।

पुराणों, विशेषकर देवीपुराण के 23वें अध्याय में चिह्न पूजन की विधि दी गई है जो भारतीय परम्पराओं का साक्ष्य लिए है। ऐसा लगता है कि गुप्तकाल तक यह चिह्न पूजन विधि शासक वर्ग में प्रचलित थी। इससे नीरामय-नीरोग और निरुपद्रव रहने की कामना भी जुड़ी हुई रही है। आचार्य वराहमिहिर ने हालांकि चिह्नों का संकेत दिया है लेकिन यवन राजदूत हेलियोदोरस ने सर्वप्रथम गरुड़ ध्वज स्तम्भ के रूप में जो पहचान दी है, वह सिद्ध करती है कि शासकों ने देवालयों में विराजित देवताओं के सम्मुख वाहन जैसे चिह्न को स्थापित कर जनमानस में चिह्नों के आदर के भाव का उन्मुक्त रूप से संचरण किया है। कृत्यकल्पतरु में भी इस विधि को उद्धृत किया गया है।

पुराणकार का मत है कि कार्तिक के आरम्भ में केवल दुग्धपान करके अथवा शाकभोजी, यावकभोजी होकर, एक ही समय भोजन करें और सुबह स्नान करके देवी के परायण हो जाएं। इस अर्चना के लिए घृत, दुग्ध, यव तथा तिलहोम करते हुए देवी के मन्त्रों का पाठ करना चाहिए: क्षीराशी कार्तिकारभ्य देव्या भक्तिरतो नृप:। शाक यावक एकाशी प्रात: स्नायी शिवानत:।। पूजयेत् तिलहोमैस्तु दधिक्षीरघृतादिभि:। कुर्यादेवी मन्त्रेण श्रुण पूजाफलं हरे।। इससे लगता है कि व्रतार्थी होकर ही चिह्न पूजन किया जाता था। यह पूजन-अर्चन स्वयं भावनायुक्त होकर अथवा प्रतिनिधि से विधान के अनुसार करवाया जाता था। इसके पीछे यह कामना रहती थी कि रोग और शत्रुजन्य आपदाओं का शमन हो। किसी भी प्रकार के उत्पात, ग्रहजनित विपदा और देशविनाश आदि बाधाओं का भी निराकरण हो: न तस्य भवति व्याधिर्न च शत्रुकृतं भयम्। नोत्पातग्रहदु:खं वा न च राष्ट्रं विनश्यति।।

ध्वजाओं को प्राय: चिह्नों से युक्त किया जाता था। इसका आशय है कि देवी के रूपों का अंकन होता था। पुराणकार ने ऐसे बारह रूपों का विवरण दिया है-

सिंहवाहिनी अंकित ध्वज: ऐसी पताका का पूजन करने से वैरियों से होने वाले भय का निवारण होता है। यह पूजन उमा की पूजा के समान होता है: सिंहारूढा ध्वजे नृपस्य रिपुहा उमा। यदि ऐसे स्वरूप की पूजा द्वार पर होती है तो उसको भी वैरियों का भय नहीं रहता है: द्वारस्था पूज्यते वत्स न तस्य रिपुजं भयम्।। इस विवरण से लगता है कि कभी भवन के द्वार पर भी सिंहवाहिनी देवी उमा का अंकन या उत्कीर्णन होता था।

कपिसंस्था देवी ध्वज: ऐसा ध्वज जिस पर वानर पर आरूढ़ देवी को पूजा जाता हो, तो समस्त शत्रुओं का विनाश होता है। वानरारूढ़ देवी का नाम महामाया आया है: कपिसंस्था महामाया सर्वशत्रु विनाशिनी।

वृषारूढ़ देवी ध्वज: बैल पर आरूढ़ देवी के पूजन से अभीष्ट की सिद्धि होती है। इससे गज जैसे वाहन भी